भारतीय संसद एवं न्यायपालिका

डा0 जे. पी. गुप्ता
सहायक अध्यापक
विभाग– राजनीति विज्ञान
पी.सी.विज्ञान महाविद्यालय
जे.पी.विश्वविद्यालय, छपरा, सारण बिहार

भारत में संघीय गणतंत्र के अंतर्गत शासन प्रणाली की स्थापना की गयी है। भारत संघ की संसद, राष्ट्रपति और दो सदनों राज्यसभा और लोकसभा के मिलने से निर्मित हैं।[1] दोनों सदनों में लोकसभा को वित्तीय मामलों में वरीयता प्रदान की गयी है। राज्यसभा को वित्तीय मामलों में सीमित शक्तियाँ प्रदान की गयी है। संघ की कार्यपालिका में दोनों सदनों के सदस्य होते है जो सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होते है। इस प्रकार संघ की कार्यपालिका एवं संसद के बीच घनिष्ठ संबंध स्थापित है।

भारत की राजनीतिक व्यवस्था में संसद का स्थान प्रमुख है। संविधान के अंतर्गत संसद को व्यापक शक्तियाँ प्राप्त है और इसकी भूमिका वही है जो कि किसी प्रभुता सम्पन्न विधान मंडल की है।[2] शक्तियों के विभाजन की योजना, संकटकाल में उसकी भूमिका तथा न्यायपालिका, कार्यपालिका, राज्य विधानमंडल एवं संविधान के अंतर्गत प्राधिकारों के साथ उसके संबंधों का विश्लेषण करने से इसकी व्यापक शक्तियों का स्पष्ट रूप से पता चल जाता है।

संविधान में संसद और राज्य विधानमंडलों के बीच विधायी शक्तियों का विभाजन कर दिया गया है। इसकी तीन

सूचियाँ है– संघ सूची, राज्य सूची एवं समवर्ती सूची। सामान्य तौर पर संघ सूची के विषयो पर संसद को, राज्य सूची के विषयों पर राज्य विधान मंडल को अधिकार प्रदान किया गया है। जहाँ तक समवर्ती सूची का प्रश्न है, इस सूची में उल्लेखित विषयों पर संसद और राज्य विधानमंडल दोनों को कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है,[3] जो विषय इन तीन सुचियों में से किसी भी सूची में नहीं आते है। उन पर विधि निर्माण करने का अधिकार संसद को प्राप्त है,[4] इसके अलावा संघीये क्षेत्रो के संबंध में इनमें से किसी भी सूची के विषय में चाहे वे राज्य सूची में ही क्यों न हो संसद को विधि निर्माण का अधिकार प्राप्त है,[5] इसके अलावा यदि संसद किसी ऐसे विषय पर किसी राज्य का कानून है ओर वह संसदीय कानून के प्रतिकूल है, तो संसदीय कानून मान्य होगा, जिस सीमा तक राज्य का कानून संसदीय कानून के प्रतिकूल है उस हद तक वह कानून प्रभावहीन हो जाएगा[6]। इस नियम का एक ही अपवाद है वह यह है कि यदी समवर्ती सूची के किसी विषय पर किसी राज्य

का कानून संसद के किसी कानून बनने से पहले कानून के प्रतिकूल हो, तो वही प्रभावी होता है बशर्ते कि वह राष्ट्रपति के विचार के लिये आरक्षित रखा गया हो और उस पर राष्ट्रपति की अनुमती मिल गयी हो, परन्तु इस विषय में भी संसद यदि चाहे तो राज्य विधान मंडल द्वारा पारित कानून में संशोधन या परिवर्तन कर सकती हैं और चाहे तो उसको निरस्त भी कर सकती है[7]। कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में संसद को राज्यों के अन्य क्षेत्रो में भी कानून बनाने का अधिकर प्रदान किया गया है, यथा जब भी राज्य सभा विशेष वहुमत द्वारा यह संकल्प पारित कर दे कि राष्ट्रीय हित में राज्य सूची के किसी विशिष्ट विषय पर संसद द्वारा कानून बनाना आवश्यक

या कालोचित है तो संसद उस विषय पर कानून बना सकती है[8]। यदि किसी समय संसद का सत्र न हो रहा हो, परिस्थितिवश अविलंब कार्यवाही करना आवश्यक हो तो राष्ट्रपति को अध्यादेश जारी करने का अधिकार संविधान द्वारा प्रदान किया गया है[9]। इन अध्यादेशों का बल और प्रभाव वैसा ही होता हैं जैसा कि संसद के अधिनियमों का, लेकिन यह अस्थायी होता है। ऐसे प्रत्येक अध्यादेश को संसद के दोनो सदनो के सामने उपस्थित करना आवश्यक है और संसद का अधिवेशन प्रारंभ होने के 6 सप्ताह के बाद अध्यादेश का प्रवर्तण समाप्त हो जाता है। उससे पहले यदि राष्ट्रपति उसे वापस ले[10] या संसद अपना अनुमोदन कर दे तो और बात है।[11] अध्यादेश को आगे बढ़ाने या उसे स्थायी बनाना है तो संसद को विधि निर्माण करना पड़ता है। किसी राज्य में सांविधानिक व्यवस्था के विफल होने पर राष्ट्रपति उद्घोषणा द्वारा राज्य सरकार के कृत्य तथा राज्य विधानमंडल के अतिरिक्त राज्य के किसी भी निकाय प्राधिकरण की शाक्तियाँ भी अपने हाथ में ले सकता हैं। उस दशा में यह उद्घोषणा कर दी जाती हैं कि राज्य विधानमंडल की शक्तियों का प्रयोग संसद द्वारा या उसके प्राधिकार के अंतर्गत ही हो सकता है।[12] उस दशा में संसद राज्य विधान मंडल की विधायी शक्ति राष्ट्रपति को दे सकती है। राष्ट्रपति को वह यह भी अधिकार दे सकती है, वह उस शक्ति को किसी और प्राधिकार को दे दे।[13]

इस प्रकार के व्यापक विधायी क्षेत्राधिकार के अलावा संसद को संविधान में संशोधन करने का संविधायी शक्तिया भी दी गयी है। इस शक्ति का विस्तार भी बहुत है। संसद तत्संबंधी अनुच्छेद 368 के उपबंधो में भी संशोधन कर सकती है, जिसमें संविधान में संशोधन करने की प्रक्रिया का उल्लेख है।

अतः भारतीय संसद को संविधान के द्वारा वृहत शक्तियाँ प्रदान की गयी है, लेकिन इस प्रकार की वृहत शक्तियों के बावजूद प्रश्न उठता है कि क्या भारत में संसदीय सर्वोच्चता कायम है? इसका उत्तर नाकारात्मक होगा। जबकि भारतीये संविधान लिखित है और संसद सहित सरकार के विभिन्न अंग अपनी सांविधानिक सीमाओं में रहते हुए ही कार्य कर सकता है। भारतीय संसद की शक्तियाँ भी संविधान द्वारा निश्चित कर दी गयी है, और उस निर्धारित सीमा के अंतर्गत इसे कार्य करना पड़ता है। यदि संसद अपनी निर्धारित सांविधानिक क्षेत्राधिकार का अतिक्रमण करती है तो न्यायपालिका उसे रोक सकती है। भारतीय संविधान

न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धाँत को मान्यता प्रदान करता है जिसके अनुसार न्यायपालिका को यह अधिकार दिया गया है कि वह संसद द्वारा पारित किये गये कानूनो का परीक्षण करे और यदि कोई कानून संविधान के किसी उपबंध के विरूद्ध है तो उसे असंवैधानिक घोषित करके उसे लागू होने से रोक सकती है।

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि भारतीय संसदीय व्यवस्था में संसद की सर्वोच्चता नहीं है। भारतीय व्यवस्था में न्यायपालिका संसद की तानाशाही शक्तियों पर अंकुश लगा सकती है।

संदर्भ विवरणिका

1. भारतीय संविधान, अनुच्छेद–79।
2. ऑल इंडिया रिपोर्टर, 1954,

पृष्ट 332 में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश माननीय फजल जी का विचार।

3. भारतीय संविधान, अनुच्छेद 246 एवं सातवीं अनुसूची ।

4. भातीय संविधान, अनुच्छेद 248।

5. भारतीय संविधान, अनुच्छेद 246 (4)।

6. भारतीय संविधान, अनुच्छेद 254 (1)।

7. भारतीय संविधान, अनुच्छेद 254 (2)।

8. भारतीय संविधान, अनुच्छेद 249, इस प्रकार का कानून अस्थायी होता है क्योंकि यह संकल्प प्रारंभ में एक वर्ष तक ही लागू रहता है। उसके बाद एक वर्ष तक के लिए बढ़ाया जा सकता है।

9. भारतीय सविधान, अनुच्छेद 123।

10. जैसे बी0 पी0 सिंह सरकार के समय रामजन्म भूमि संबंधी अधिग्रहण अध्यादेश की घोषणा के अविलम्ब बाद वापस ले लिया गया।

11. भारतीय सविधान अनुच्छेद 123 (2)।

12. भारतीय सविधान अनुच्छेद 356।

13. भारतीय सविधान अनुच्छेद 357।